IOSR Journal of Humanities And Social Science (IOSR-JHSS)
Volume 25, Issue 9, Series 1 (September. 2020) 63-67
e-ISSN: 2279-0837, p-ISSN: 2279-0845.
www.iosrjournals.org

अमरकान्त की कहानियों का शिल्प

डॉ. चन्द्रशेखर रावल
ऐसोसिएट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग,
सेठ पी.सी. बागला (पी.जी.) कॉलेज, हाथरस।

अमरकान्त की कहानियों का शिल्प उनके संवेदना–पक्ष की भाँति सशक्त है। उनकी कहानियों की कलात्मकता उनकी संवेदना को रूपायित करती है और इसी अर्थ में वस्तु और रूप की दृष्टि से अमरकान्त प्रेमचन्द की परम्परा के वाहक हैं। परमानन्द श्रीवास्तव के शब्दों में– "अमरकान्त ने सपाट वर्णन की उस पद्धति का उपयोग किया है जो प्रेमचन्द का विकास भी है और प्रेमचन्द के बाद के आत्मकेन्द्री रूपवाद से सचेत प्रस्थान भी है। शिल्प अमरकान्त के लिए सहज अभिव्यक्ति का ही हिस्सा है और अभिव्यक्ति का संयम रचनात्मक प्रभाव का खास गुण।"[1]

अमरकान्त की अभिव्यक्ति की अभिधा प्रधान शैली ही उन्हें अनूठा बनाती है। सीधे और सरल मानों में ये बाह्यान्तर का चित्रण और वर्णन करते हैं। उनकी कहानियाँ हमें चौंकाती नहीं अपितु प्रभावित करती हैं। "उनके कथा संसार में चरम–बिन्दु नहीं के बराबर है फिर भी अपनी सहजता, सपाट बयानी, संवेदना और सयानेपन के कारण वे एक अकेला, अछूता, अदम्य प्रभाव छोड़ते हैं।"[2] अमरकान्त की कहानियों की संवेदना स्थितियों के गुम्फन से पैदा होती है और वह अभिव्यक्ति पाने के लिए रूप ग्रहण करती है। सरसरी तौर पर उनकी कहानियाँ पढ़ने पर ऐसा लगता है कि अमरकान्त शिल्प के प्रति सजग नहीं है; किन्तु ऐसा होता नहीं है। इस सम्बन्ध में मधुरेश ने ठीक ही लिखा है– "उनकी कहानियाँ ऊपरी तौर पर कैसी भी, शिल्प सजगता में जैसी हीन और असावधान दिखाई देती हैं, वस्तुतः वे वैसी हैं नहीं। यह बात अलग है कि अपनी सादगी के कारण ही वह सजगता उतनी आसानी से पकड़ में नहीं आती है जितनी आसानी से राजेन्द्र यादव, रेणु या निर्मल वर्मा की कहानियों में आ जाती है। इन कहानीकारों की तरह अमरकान्त की कहानियाँ कहीं भी अपने प्रभाव से अभिभूत और जड़ नहीं करतीं, वे हमें टीसती और झकझोरती सी हैं।"[3]

किसी भी रचनाकार को रचना की वस्तु या स्थिति के वर्णन या चित्रण में इतना वास्तविक होना पड़ता है कि वह चित्र, जिसे रचनाकार पाठक को संप्रेषित करना चाहता है, साक्षात हो जाए। और यही संप्रेषणीयता अथवा नाट्य–दृश्यता किसी भी रचना को परखने की कसौटी भी होती है। वस्तुतः शिल्प का कार्य बाह्यान्तर के यथार्थ को चित्रित कर उसे संप्रेषणीय बनाना होता है। चरित्र के केवल बाह्य रूप के चित्रण से उसका सम्पूर्ण चित्र या बिम्ब पाठक के मन में नहीं बनता बल्कि चरित्र की चेष्टाओं, उसके आचरण अथवा अन्य पात्रों के प्रति उसकी प्रतिक्रिया इत्यादि गुण उस चित्र को सजीव और विश्वसनीय बनाते हैं। अमरकान्त मूलतः स्वातत्र्योत्तर भारत की संवेदना के कहानीकार हैं। उनकी कहानियाँ मोहभंग, विसंगति और विडम्बना को व्यक्त करती हैं जो परिस्थितिजन्य है और यही परिस्थितियों का दवाब, अमरकान्त के कलापक्ष पर दिखाई देता है। अमरकान्त कहानियों की योजना इस प्रकार करते हैं कि उनमें नाट्य–दृश्यता का गुण सहज रूप में दिखलाई पड़ता है।

विभिन्न स्थितियों के संयोजन से अमरकान्त ने अपनी कहानियों में कथनी–करनी के अन्तर को रेखांकित किया है। अमरकान्त ने प्रायः मध्यवर्ग और उच्चवर्ग के दोहरे चरित्र को उजागर किया है, जो आदर्शों और सिद्धान्तों के मुखौटों में अपना असली रूप छिपाये रहते हैं। व्यक्ति की कथनी और करनी जब परस्पर विरुद्ध होती है तो द्वन्द्वात्मकता को जन्म देती है। इस द्वन्द्वात्मकता का उदाहरण 'जन्मकुण्डली' के शिवदास बाबू के कथन और व्यवहार के अन्तर के रूप में देखा जा सकता है– "वह हलकी–सी भुनभुनाहट वाली आवाज़ में बोले, देखो, मैं कुछ करूँगा। मैं तो हमेशा तुम लोगों के लिए चिंतित रहता हूँ। दिन–रात तुम्हीं लोगों के बारे में सोचता रहता हूँ, जो कुछ कर रहा हूँ, तुम्हीं लोगों के लिए कर रहा हूँ। तुम सोच नहीं सकते कि किन परेशानियों में मुझे रहना पड़ता है। पर मैं अपनी जान की परवाह नहीं करता।.. यहाँ तो नींद ही नहीं आती। दिन–रात देश, समाज, जाति व धर्म आदि के कल्याण के लिए सोचते रहते हैं– पर इसके बदले में मुझे मिलता क्या है?"[4] शिवदास बाबू के इस लम्बे–चौड़े प्रवचन के बावजूद उनका असली रूप प्रकट हो ही जाता। अमरकान्त की अन्य कहानियों में 'मुलाकात' 'पलाश के फूल' 'हत्यारे' एवं 'डिप्टी कलक्टरी' इत्यादि का नाम महत्वपूर्ण है, जिसमें उन्होंने कथनी–करनी के अन्तर के फलस्वरूप उत्पन्न द्वन्द्वात्मक नाटकीयता को प्रभावशाली ढंग से उकेरा है।

जैसा हम पहले कह चुके हैं कि कथाकार वस्तु या स्थिति का इस ढंग से चित्रण करता है कि वह पाठक तक पूर्ण रूप से संप्रेषित हो जाये अर्थात् जिस चीज को कथाकार महसूस कर रहा है, उसे पाठक भी उसी तरह महसूस

करे। जब कथाकार वैसा ही प्रभाव उत्पन्न करने के लिए वस्तु, स्थिति या घटना को उपस्थित करता है, उसे ही सादृश्य–विधान कहा जाता है। यह सादृश्य–विधान कथाकार की अनुभव और अभिव्यक्ति की क्षमता को प्रकट करने के साथ–साथ उसकी संवेदना और वैचारिकता को भी दर्शाता है। अमरकान्त के सादृश्य विधान में नवीनता है, क्योंकि दृश्य या घटना को देखकर उनके मन में जो दृश्य, घटनाएं, वस्तु या व्यक्ति आते हैं वे उनके आस–पास के या परिचित होते हुए भी रचनाओं में अपरिचित होकर एक नए रूप में आते हैं। उपमा, प्रतीक, विशेषण, क्रियाविशेषण व लोकोक्ति प्रयोग इत्यादि से अमरकान्त का सादृश्य–विधान निर्मित है, और इसीलिए उसमें सजीवता और प्रभावोत्पादकता का वह गुण है जो अन्य कहानीकारों के यहाँ दुर्लभ है। उदाहरण के लिए उनकी 'इण्टरव्यू' कहानी को लिया जा सकता है, जिसमें इण्टरव्यू के लिए अन्दर बुलाए जाने वाले अभ्यर्थियों की स्थिति और मनोदशा को समझने व उसे अभिव्यक्त करने का विलक्षण कौशल अमरकान्त ने दिखाया है– "धीरे–धीरे, पैरों को कड़ा करके और कदमों को तौलते हुए वे आगे बढ़ रहे थे। उनके दिल बुरी तरह धड़क रहे थे, होंठ काँप रहे थे और बरबस हल्की, टेढ़ी तथा मूर्ख मुस्कराहट उनके मुँह पर फूट रही थी। उनकी आँखें नीचे थीं और उनमें व्यर्थ महत्त्व, बनावटी सभ्यता तथा तुच्छ शर्म के ऐसे भाव थे जैसे शादी के दिन मंडप की तरफ बढ़ते हुए दूल्हे के पीछे–पीछे धीरे–धीरे चलने वाले दूर के ऐरे–गैरे भाईयों के मुख पर दृष्टिगोचर होते हैं।"[5]

इस दृष्टि से अमरकान्त की लगभग सभी कहानियाँ महत्त्वपूर्ण हैं; किन्तु फिर भी विशेष रूप से उल्लेखनीय कहानियों में 'तन्दुरुस्ती का रोग', 'महान चेहरा', 'संत तुलसीदास और सोलहवाँ साल', 'पलाश के फूल' 'मौत का नगर', 'शुभचिन्ता', 'निर्वासित', 'एक नौजवान की मौत', 'मुक्ति', 'उनका जाना और आना', 'मकान', 'बउरैया कोदो', 'सपूत', 'यह दुनिया है', 'प्रतीक्षा जारी है', 'जाँच और बच्चे', 'सहयात्री' एवं 'सुख' और दुःख का साथ' इत्यादि का नाम प्रमुखता से लिया जा सकता है।

अमरकान्त की कहानियों में कहीं–कहीं प्रतीकों का प्रयोग भी सहज ही लक्षित किया जा सकता है। उनकी प्रायः सभी कहानियों के शीर्षक भी प्रतीकात्मक हैं, जो कहानी के कथ्य के साथ मिलकर अपना अर्थ खोलते हैं। उदाहरण के लिए उनकी 'मकान' कहानी का शीर्षक व्यवस्था का प्रतीक है। वर्तमान अमानवीय व तर्कहीन व्यवस्था को अमरकान्त ने मकान शीर्षक के सहारे व्यक्त किया है। इस निर्मम व्यवस्था के प्रतीक 'मकान' में रहकर व्यक्ति मानवता और मूल्यों को भूल जाता है तथा अपनों से ही छल करने के लिए विवश हो जाता है, किन्तु जिस मकान की कल्पना से कहानी के वाचक की आँखें चमक उठती हैं वह वस्तुतः समाजवादी व्यवस्था का प्रतीक है जिसमें व्यक्ति सुख, संतोष और सुरक्षा का अनुभव करता है। इस व्यवस्था से मुक्त होकर वह बिल्कुल बदल जाता है "घर से बाहर रहने पर मैं हमेशा घर के बारे में ही सोचता हूँ और घर में घुसते ही उससे नफरत करने लगता हूँ। मैं एकदम बदल जाता हूँ, गोया आदमी से शैतान हो गया होऊँ। ... लेकिन घर से जब मैं बाहर निकलता हूँ तब मेरा मन अपने–ही–आप पश्चाताप से भर उठता है। मुझमें बीबी और बच्चों का असीम प्यार उमड़कर लहरें लेने लगता है।... लगता है कि उनको जितना मैं प्यार करता हूँ, उतना कोई भी किसी को न करता होगा। मैं उनको खुश देखना चाहता हूँ।"[6] यहाँ घर से बाहर पहुँच जाना निश्चित ही उस समाजवादी व्यवस्था का प्रतीक है जहाँ अमानवीयता, असमानता और घृणा के लिए कोई स्थान नहीं। प्रतीकात्मकता की दृष्टि से अमरकान्त की 'मौत का नगर', 'ज़िन्दगी और जोंक', 'पलाश के फूल', 'छिपकली', 'जनमार्गी', 'कुहासा', मछुआ', 'गगन बिहारी' 'मछुआ', 'शाम के घिरते अंधेरे में भटकता नौजवान' एवं 'सहधर्मिणी' इत्यादि महत्त्वपूर्ण कहानियाँ हैं।

लोकोक्ति और मुहावरों का प्रयोग यूँ तो भाषागत विशेषता के अन्तर्गत आता है, किन्तु यह ध्यान रखना भी आवश्यक है कि लोकोक्ति और मुहावरों में दृश्यात्मकता को निर्मित करने तथा स्थिति–विशेष जैसा ही प्रभाव उत्पन्न करने की क्षमता भी होती है। अमरकान्त की कहानियों में लोकोक्ति और मुहावरों का प्रयोग उनकी भाषा को जीवन्त तो बनाता ही है, साथ ही कहानी को विश्वसनीय और प्रभावशाली भी बनाता है। 'मूस' कहानी में मुनरी के रातभर घर से गायब रहने पर जब मूस परेशान होता है और परबतिया पर क्रोधित हो जाता है, तब परबतिया कहती है– "खेत खाये गधा और मार खाये जुलाहा!"[7] यहाँ यह लोकोक्ति उस स्थिति जैसा ही दृश्य उपस्थित कर वैसे ही प्रभाव की सृष्टि भी कर रही है।

अनेक मुहावरों का प्रयोग भी अमरकान्त के यहाँ इसी तरह हुआ है। 'संत तुलसीदास और सोलहवाँ साल' नामक कहानी में शकुन्तला ने रणबहादुर सिंह के लिए पत्र में लिखा है– "आप जैसा काठ का कलेजा किसी का न होगा।"[8] यहाँ 'काठ का कलेजा' एक मुहावरा है, जिसका अर्थ है संवेदनाहीन होना, किन्तु इस मुहावरे के प्रयोग में भी एक प्रभावशाली दृश्यात्मकता का गुण विद्यमान है। इसी प्रकार के अनेक मुहावरे और लोकोक्तियों के प्रयोग अमरकान्त की कहानियों में सर्वत्र दृष्टिगोचर होते हैं।

अमरकान्त ने कहानी की वस्तु और स्थिति की और अधिक स्पष्ट करने के लिए जहाँ सादृश्य–विधान का सहारा लिया, वहीं उनकी अनेक कहानियाँ ऐसी भी, जिनमें उन्होंने इतने सजीव और सहज वर्णन किए कि उनमें किसी तरह के सादृश्य विधान की आवश्यकता ही नहीं रह गई है। उदाहरण के लिए 'डिप्टी कलक्टरी' को लिया जा सकता है,

जिसमें शकलदीप बाबू जब डिप्टी कलक्टरी का परिणाम घोषित हो जाने और उनके पुत्र नारायण के न चुने जाने पर मंदिर से घर आते हैं तो अमरकान्त उसका सजीव वर्णन इस प्रकार करते हैं– ''सारे घर में मुर्दनी छायी हुई थी। छोटे–से आँगन में गन्दा पानी, मिट्टी, बाहर से उड़कर आये हुए सूखे पत्ते तथा गन्दे कागज पड़े थे, और नाबदान से दुर्गन्ध आ रही थी। ओसारे में पड़ी पुरानी बँसखट पर बहुत–से गन्दे कपड़े पड़े थे और रसोईघर से उस वक्त भी धुंआ उठ–उठ कर सारे घर की साँस को घोट रहा था। कहीं कोई खटर–पटर नहीं हो रही थी और मालूम होता था कि घर में कोई है ही नहीं।''[9] यहाँ घर की स्थिति का वर्णन इस प्रकार किया गया है कि वहाँ का सारा वातावरण साकार हो उठा है। यहाँ सादृश्य–विधान के लिए कोई अवकाश ही नहीं है। इसी तरह के अनेक उदाहरण अमरकान्त की कहानियों में मिल जाते हैं, जहाँ वर्णन ही इतना सजीव और जीवन्त है कि सादृश्य–विधान की आवश्यकता रहती ही नहीं।

तर्कहीन और विसंगतिपूर्ण स्थितियाँ ही तर्कहीन या एब्सर्ड मनःस्थिति उत्पन्न करती है, जिनका प्रभाव सम्बन्धित व्यक्ति की चेष्टाओं और व्यवहार पर पड़ता है। इसी अर्थ में एब्सर्डिटी के तत्त्व अमरकान्त की कहानियों में दृष्टिगोचर होते हैं। वस्तुतः एब्सर्डिटी अमरकान्त के यहाँ स्वतंत्र या किसी मूल्य के रूप में दिखाई नहीं देती, बल्कि वह विसंगति और विषमता को प्रकट करने के माध्यम के रूप में दिखलाई पड़ती है। अमरकान्त ने एब्सर्ड मनःस्थिति का चित्रण अनेक कहानियों में किया है। 'डिप्टी कलक्टरी' के शकलदीप बाबू को अपने पुत्र के डिप्टी कलक्टर होने में बहुत संदेह है। उन्हें अपने पुत्र की योग्यता पर विश्वास नहीं है और न अपने पूजा–पाठ पर। इसी विश्वासहीनता के कारण उनका व्यवहार और मनःस्थिति एब्सर्ड हैं– ''एक दिन रात के लगभग एक बजे शकलदीप बाबू ने उठकर पत्नी को जगाया और उसको अलग ले जाते हुए बेशर्म महाब्राह्मण की तरह हँसते हुए प्रश्न किया– कहो भाई, कुछ खाने को होगा? बहुत देर से नींद ही नहीं लग रही है, पेट कुछ माँग रहा है। पहले मैंने सोचा, जाने भी दो, यह कोई खाने का समय है, पर इससे काम बनते न दिखा तो तुमको जगाया। शाम को खाया था, सब पच गया।''[10] शकलदीप बाबू की यह बेवक्त की भूख उनकी विश्वासहीनता, बदहवासी और बेचैनी से जनित एब्सर्ड मनःस्थिति का ही परिणाम है।

रचना में रचनाकार की अनुपस्थिति को तटस्थता कहा जा सकता है। रचना में रचनाकार की अनुपस्थिति का तात्पर्य यह कदापि नहीं है कि उसमें रचनाकार का बोध भी नहीं होता, क्योंकि जिन स्थितियों की योजना रचनाकार करता है वे उसके बोध से गहरे तौर पर संपृक्त होती हैं। वास्तव में रचनाकार स्वयं को जब दूसरों की दृष्टि से देखता है, उसे तटस्थ दृष्टि या तटस्थता माना जा सकता है। अमरकान्त की कहानियों की तटस्थता कुछ ऐसी ही है। यह तटस्थता का ही परिणाम है कि अमरकान्त यदि व्यंग्य करते हैं तो शोषक और शोषित दोनों वर्गों पर करते हैं। किन्तु जहाँ शोषक वर्ग के प्रति किया गया व्यंग्य पाठक के मन में उसके प्रति घृणा पैदा करता है तो वहीं शोषित या अभावग्रस्त निम्नवर्ग के प्रति किया गया व्यंग्य उसके प्रति पाठक के मन में करुणा पैदा करता है, और अन्ततः व्यवस्था की अमानवीयता पर व्यंग्य बन जाता है यों तो अमरकान्त की आत्मीयता निम्नवर्ग अथवा अभावग्रस्त लोगों के प्रति है, फिर भी एक लेखक की मुद्रा में वे तटस्थ रचनाकार हैं। अमरकान्त अपने साधारण पात्रों की छोटी–से–छोटी बातों को बहुत अच्छी तरह से देखते और समझते हैं। उनकी चालाकियों, काइयाँपन, तिकड़मों व हथकण्डों को वे उनकी विवशता और अनिवार्यता के रूप में देखते हैं तथा यही बोध अमरकान्त को तटस्थ रहकर व्यंग्य के माध्यम से उनका उपहास करने की शक्ति देता है। वस्तुतः यह तटस्थता अमरकान्त की कहानियों का गुण ही नहीं वरन् स्वभाव भी है। ममता कालिया ने इस सम्बन्ध में ठीक ही लिखा है– "अमरकान्त धूत से धूर्त लोगों की संगत में लम्बे समय तक रहकर भी अलग, असम्पृक्त व अकलंक रहते आए हैं। इस तरह की ग्रहणशीलता का अभाव उनमें काबिले रश्क है। दूसरे की सफलता, व्यस्तता, कटुता, धूर्तता की टक्कर में उनकी तटस्थता की प्राचीर और भी पक्की होती जाती है। कोई प्रलोभन उनके लिए पर्याप्त प्रलोभन नहीं है।''[11]

अमरकान्त की कथा–रचना पद्धति पर विचार करते हुए विजयमोहन सिंह ने उसे दो वर्गों में रखकर देखा है ''अमरकान्त ने प्रारम्भ से ही मुख्य रूप से कथा–रचना की दो पद्धतियाँ अपनाई हैं : आत्मालाप या आत्मकथ्य की पद्धति तथा रेखाचित्र और व्यक्तिचित्र की पद्धति। इनमें ही प्रछन्न रूप से वह व्यंग्य अथवा आत्मव्यंग्य प्रधान रहता है जिसे वे परिवेश के अन्तर्विरोधों सहित व्यक्त करते हैं। यही पद्धति 'ज़िन्दगी और जोंक' से लेकर इधर की कहानियों तक में दुहराई गई है।''[12] मौटे तौर पर देखों तो अमरकान्त की अधिकांश कहानियाँ इन दोनों वर्गो के अन्तर्गत आ जाती है। जैसे– 'निर्वासित', 'लड़की की शादी' 'अमेरिका की यात्रा', 'कबड्डी', 'गले की जंजीर' एवं 'विजेता' इत्यादि कहानियाँ आत्मालाप अथवा आत्मकथ्य की पद्धति के अन्तर्गत तथा 'सवा रुपए', 'जनमार्गी' 'जिन्दगी और जोक', 'स्वामी', 'डिप्टी कलक्टरी', 'दुर्घटना' एवं 'देश के लोग' इत्यादि कहानियाँ रेखाचित्र अथवा व्यक्तिचित्र की पद्धति के अन्तर्गत मानी जा सकती हैं।

किन्तु अमरकान्त की कहानियों को केवल आत्मकथ्य अथवा रेखाचित्र मान लेना उनका सतही मूल्यांकन करना है। वास्तव में अमरकान्त जिस ढंग से व्यक्ति को उसके परिवेश के समस्त अन्तर्विरोधों के साथ चित्रित करते हैं; वह व्यक्तिचित्र एक पूरे वर्ग की मानसिकता और व्यवहार का एक प्रामाणिक दस्तावेज़ बन जाता है। पूर्व–दीप्ति, कहानी की

एक ऐसी पद्धति है जिससे कहानी थोड़े समय में ही एक लम्बी यात्रा पूरी कर लेती है। अमरकान्त ने अपनी कहानियों में इस पद्धति का भी प्रयोग किया है। व्यक्ति की मानसिकता, परिवेश, संस्कार और अन्य व्यक्तियों के साथ उसका व्यवहार इत्यादि सभी उसके अतीत से भी सम्बद्ध होते हैं। अतीत की जिन बातों का प्रभाव चरित्र के व्यवहार और मानसिकता पर पड़ रहा होता है, उन्हें पूर्व–दीप्ति (फ्लैश बैक) पद्धति के सहारे कथाकार कहानी में प्रस्तुत कर देता है। अमरकान्त ने पूर्व–दीप्ति की इस पद्धति का निर्वाह अपनी 'जनमार्गी' 'मछुआ' 'कलाप्रेमी' 'शुभचिन्ता' 'छिपकली' 'मूस' 'देश के लोग' एवं 'निर्वासित' आदि कहानियों में सफलतापूर्वक किया है।

अमरकान्त की कहानियाँ भारत के सामान्य व्यक्ति की मानसिकता, उसके पिछड़ेपन तथा पाखण्ड को बड़े ही विडम्बनापूर्ण तरीके से व्यक्त करती है और इसी अर्थ में वे भारतीय हैं। इस सम्बन्ध में विजयमोहन सिंह का कथन महत्वूपर्ण है कि– ''अमरकान्त की कहानियाँ एक विशेष, अर्थ में भारतीय हैं, वे सामान्य भारतीय व्यक्ति के संस्कारों, भावनाओं और भावुकता को भी व्यक्त करती हैं तथा उनके साथ जो पिछड़ापन, अन्धविश्वास और पाखण्ड जुड़ा हुआ है, उन्हें भी विडम्बनात्मक ढंग से उजागर करती चलती हैं। भारतीय निम्न–मध्यवर्गीय मनुष्य की भावनाओं को जितना समझते और उनका आदर करते हैं, उतना ही उसके अन्तर्विरोधों को भी तीखे व्यंग्यात्मक ढंग से व्यक्त करते हैं। उनकी सहानुभूति प्रधान रूप से समाज के निचले तबके के साथ है जिसे वे उच्चवर्गों की तुलना में हमेशा ज्यादा मानवीय, दया, निरीह, साहसपूर्ण और सरल पाते हैं। उसकी तुलना में मध्यवर्गीय व्यक्ति जितना काइयाँ, कमीना और कायर होता है, इसे उनकी कहानियाँ आरोपित अथवा पूर्वाग्रहपूर्ण ढंग से नहीं बल्कि वास्तविकता का विश्लेषण करती हुई उद्घाटित करती हैं।''[13]

पारिवारिकता या पारिवारिक संगठन भारतीय समाज की एक बहुत बड़ी विशेषता है। अमरकान्त ने अपने समाज की इस प्रवृत्ति को अन्य कहानीकारों की अपेक्षा अधिक गहराई और सच्चाई से समझा है। अमरकान्त की कहानियों में जितनी विश्वसनीयता और मार्मिकता है वह वस्तुतः यथार्थबोध से प्रेरित है। 'डिप्टी कलक्टरी' कहानी में डिप्टी कलक्टर न होने की जो निराशा है वह पूरे परिवार पर व्याप्त है। यही अमरकान्त की कहानियों का भारतीय संदर्भ है। साहित्य के संदर्भ में भारतीयता की बात कई विद्वानों को अटपटी लग सकती है किन्तु यह साहित्य और समीक्षा दोनों के लिए बड़े महत्त्व की है। विजयमोहन सिंह के शब्दों में– ''भारतीयता की बात साहित्य और कला के संदर्भ में असंगत–सी लगती है, किन्तु अमरकान्त जैसे कथाकार (जैसे प्रेमचन्द) इस बात के लिए कभी–कभी मजबूर करते हैं कि यह समझा जाय कि भारतीयता का संदर्भ कला और उसकी समीक्षा दोनों के लिए कितना महत्त्वपूर्ण है।''[14]

सामाजिक विषमता को व्यक्त करने के लिए व्यंग्य एक सशक्त माध्यम होता है। जब सामाजिक वातावरण में अन्तर्विरोध, विरूपता, असमानता और कथनी–करनी का अन्तर बहुत बढ़ जाता है, तब रचनाधर्मिता में व्यंग्य की संभावनाएँ बहुत बढ़ जाती हैं। भारतेन्दु युग से लेकर आज तक के साहित्य में यह बात देखी जा सकती है। अमरकान्त के यहाँ व्यंग्य उनकी संवेदना का एक भाग है और वही संवेदना प्रखर होकर शिल्प को भी मजबूती प्रदान करती है। 'ज़िन्दगी और जोंक' में अमरकान्त ने रजुआ के माध्यम से उस व्यवस्था पर व्यंग्य किया है जो नौकर नामधारी जीव के लिए किसी सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार की आवश्यकता ही नहीं समझती। यह व्यवस्था नौकर का मनमाना शोषण करना और उससे अधिक से अधिक काम लेना ही जानती है। इस तरह रजुआ पर किया गया व्यंग्य, व्यवस्था पर ही व्यंग्य बन जाता है। वस्तुतः अमरकान्त की पैनी और संवेदनशील दृष्टि सब ओर जाती है– शोषित से लेकर शोषक तक। इसीलिए कहा है कि व्यंग्य उनकी संवेदना में भी है और कहानी कला में भी। इस दृष्टि से उनकी 'कुहासा', 'कला प्रेमी', 'मैत्री', 'घर' और 'छिपकली' आदि कहानियाँ उल्लेखनीय हैं।

अमरकान्त के यहाँ भाषा उनकी कहानी कला के एक महत्त्वपूर्ण घटक के रूप में हमारे समक्ष आती है। प्रतीक, बिम्ब, नाटकीयता, दृश्यात्मकता, सांकेतिकता और चित्रात्मकता इत्यादि। भाषा के आवश्यक उपकरण हैं तथा भाषा से ही अभिव्यक्ति पाते हैं। अमरकान्त की भाषा सादगी से पूर्ण होते हुए भी विशिष्ट है। उन्होंने तत्सम, तद्भव, देशज, अंग्रेजी, अरबी और फारसी इत्यादि अनेक विदेशी भाषाओं के प्रचलित शब्दों का प्रयोग रचना में सरलता और सहजता लाने के लिए किया है। अमरकान्त पात्र और प्रसंग के अनुकूल ही शब्दों का चयन करते हैं। उनके यहाँ नैतिकता, राष्ट्रीय संकट, अखिल विश्व, निःस्वार्थ, आत्मा, सभ्य और सुसंस्कृत जैसे तत्सम शब्द है तो लच्छन, किरपा, लफंगई, छिनाल, लसरिया, भकुआ, मुँहझींसी, गुड़गुड़ी और कटाह–कुकुर जैसे देशज शब्द भी देखे जा सकते हैं। उनके यहाँ अंग्रेजी के आर्टिस्ट, कमर्शियल, एजेन्ट, सेकिण्डक्लास, ट्रेन, मिसेज, डियर, रिपोर्ट, स्टेशन, शेम–शेम और रिजर्वेशन जैसे शब्दों का प्रयोग है तो अरबी और फारसी के अव्वल, इस्तेमाल, जुल्म, दहशत, गुलामी, फिराक, लायक और तकलीफ आदि का प्रयोग भी देखा जा सकता है। वस्तुतः अमरकान्त इन शब्दों का प्रयोग भाषा को सहज, सरल और प्रामाणिक बनाने के लिए ही करते हैं।

अमरकान्त की भाषा को सशक्त और सहज बनाने वाला एक अन्य माध्यम है– मुहावरे और लोकोक्तियाँ। अमरकान्त जिस वर्ग के कहानीकार हैं उसमें मुहावरे और लोकोक्ति का प्रयोग एक सामान्य बात है। अतः केवल 'सन्त

तुलसीदास और सोलहवाँ साल' नामक कहानी में, यदि मुहावरों की भरमार मिलती है तो इसमें कोई आश्चर्य नहीं। इस अकेली कहानी में उन्होंने– बबूल के लासा, लटू होना, पार पाना कठिन होना, जोरू का गुलाम, नमक चाट–चाट कर पैसा जोड़ना, कलेजा ठंडा होना, किस खेत की मूली, चेहरा फक पड़ना, मुँह काठ का होना, काठ का कलेजा और आँखें पथरा जाना इत्यादि मुहावरों का प्रयोग किया है। इसी तरह मुहावरों का प्रयोग उनकी लगभग सभी कहानियों में देखा जा सकता है। लोकोक्ति प्रयोग से भी अमरकान्त ने अपनी भाषा की धार को पैना बनाया है। 'खेत खाये गथा, मार खाये जुलाहा', 'गधा पूछे कितना पानी' और 'सभी कुकुर काशी ही सेवेंगे तो हँडिया कौन चाटेगा' इत्यादि लोकोक्तियों का प्रयोग उनकी अनेक कहानियों में दृष्टिगोचर होता है।

इस प्रकार अमरकान्त की भाषा पर विचार करते हुए हम कह सकते हैं उन्होंने अपनी सहज और सरल भाषा में गंभीर व्यंजनाएँ की हैं। अमरकान्त की भाषा वैविध्यपूर्ण होते हुए भी सादगी से ओत–प्रोत है और पाठक के साथ सीधा संवाद स्थापित करने में सफल है। यह अकारण नहीं है कि नई कहानी की भाषा पर चिन्ता व्यक्त करते हुए नामवर सिंह ने अमरकान्त की भाषा पर सन्तोष प्रकट किया है– "प्रसन्नता की बात है कि अमरकान्त ने इस दिशा में एक आदर्श प्रस्तुत किया है। अमरकान्त की भाषा प्रेमचन्द की परम्परा का अद्यतन विकास है; वही सादगी और सफाई है। पढ़ने पर गद्य की शक्ति में विश्वास जमता है।''15

संदर्भ :

1. वर्ष–1, अमरकान्त, पृष्ठ संख्या–165
2. वही, 'कलफ और खिजाब की दुनिया से दूर' नामक ममता कालिया का लेख, पृष्ठ संख्या–101
3. वही, पृष्ठ संख्या–154–155
4. अमरकान्त की सम्पूर्ण कहानियाँ–खण्ड–2, पृष्ठ संख्या–241
5. वही (खण्ड–1), पृष्ठ संख्या–5
6. वही, (खण्ड–2) पृष्ठ संख्या–119
7. वही, (खण्ड–1) पृष्ठ संख्या–171
8. वही, पृष्ठ संख्या–24
9. वही, पृष्ठ संख्या–88–89
10. वही, पृष्ठ संख्या–85
11. वर्ष–1 : अमरकान्त, पृष्ठ संख्या–103
12. कथा समय, पृष्ठ संख्या–33
13. वही, पृष्ठ संख्या–30
14. वही, पृष्ठ संख्या–31
15. कहानी : नई कहानी, पृष्ठ संख्या–37